

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में नवीन विधाओं की रचनाधर्मिता

डॉ० मनोज कुमार

सारांश

ज्ञान के प्रकाशन की अविच्छिन्न परंपरा में संस्कृत वाङ्मय चिरकाल से उदित सूर्य की भांति जनमानस को आलोकित करता हुआ दिखाई पड़ता है। इस वाङ्मय में समाहित ज्ञानराशि इतना विशाल है कि समाज एवं जीवन के लिए उपयोगी अत्यन्त सूक्ष्म तत्व भी इससे अछूते नहीं हैं तथा इस साहित्य में उनका गहन चिन्तन प्रस्तुत किया गया है। संस्कृत की इसी व्यापकता के कारण इसका साहित्य कालजयी बना रहा। चूंकि साहित्य समाज का दर्पण होता है इसलिये समय की आवश्यकता एवं परिवर्तन के आधार पर संस्कृत साहित्य के सृजन में भी विषय एवं विधाओं में तदनुकूल परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। यह परिवर्तन साहित्य के प्राचीन विधाओं एवं विषयों को आत्मसात् करते हुए आधुनिक विषयों को ग्रहण करने एवं वैश्विक स्तर पर होने वाले साहित्यिक रचनाओं के अनुसार भी नवीन विधाओं की रचना के रूप में परिलक्षित होते हैं।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य का यह नवीन सृजन गद्य एवं पद्य दोनों रूपों में अनेकानेक विधाओं को प्रकट कर रहा है। गद्य के अन्तर्गत जीवनवृत्त, यात्रावृत्त, पत्र साहित्य, आत्मकथा, लघुकथा, चम्पूकाव्य, उपन्यास, ललित निबन्ध आदि अनेकानेक ऐसी विधायें रचित हो रही हैं जिनकी पूर्व में कोई उपस्थिति नहीं थी और अगर थी भी तो उनका स्वरूप परिवर्तित था। इसी प्रकार पद्य साहित्य के रूप में गलज्जलिका (गजल), छन्दोमुक्त गीत, कज्जलिका (कजरी), चैत्रक (चैता), सूतगृहगीत (सोहर), स्कन्धहारीय (कंहरवा), प्रचरण (पचरा), संगीतिका, प्रतीकात्मक गीतिकाव्य, चरितकाव्य, लहरीकाव्य, महाकाव्य आदि अनेकों भारतीय विधाओं के साथ-साथ सानेट, हाइकू, तांका, लीरिक आदि

वैदेशिक विधायें भी सुशोभित हो रही हैं। इन नवीन एवं विशिष्ट विधाओं के माध्यम से ज्ञान का प्रसार तो हो रहा है साथ ही साथ विभिन्न संस्कृतियों, परम्पराओं, क्षेत्रीय विशेषताओं, मूल्यों आदि का भी 'कान्तासम्मितशैली' के माध्यम से परिज्ञान हो पा रहा है। इन साहित्यों के माध्यम से विभिन्न सामाजिक समस्याओं, विसंगतियों को दूर करके समाज में सामंजस्य, सौहार्द, एकता एवं राष्ट्रीयता जैसे भावनाओं को भी जीवन में उपस्थापित करने की प्रेरणा इनके महत्व को बतलाती है।

संस्कृत साहित्य की ये अर्वाचीन विधायें इस साहित्य को विस्तार तो प्रदान कर ही रही हैं साथ ही साथ इसे समयानुकूल, सर्वग्राह्य एवं रोचक भी बना रही हैं जिससे साहित्य सृजन का परमलक्ष्य 'आत्मा का रसावेष्टित होना' सिद्ध हो रहा है।

विशिष्ट शब्द- कालजयी, गलज्जलिका, चैत्रक, संगीतिका, हाइकू, तांका, लहरीकाव्य।

संस्कृत साहित्य की महनीय एवं निरवच्छिन्न परम्परा वैदिक काल से अद्यावधि रचनाक्रम को प्राप्त होती हुई अग्रेसरता को प्राप्त है। इस क्रम में वैदिक वाङ्मय का एक और जहाँ विशाल भण्डार प्राप्त होता है वहीं तत्पश्चात प्रारम्भ हुआ लौकिक साहित्य जिसमें सम्भवतः जीवन के लिए आवश्यक सभी विषयों को ज्ञानराशि में समाहित कर प्रस्तुत कर दिया गया है। भास, कालिदास, भारवि और माघ आदि महाकवियों से परिपोषित संस्कृत साहित्य अर्वाचीनयुग में भी गद्य, पद्य एवं नाट्य रचनाकारों के श्रेष्ठ साहित्य सृजन से उत्तरोत्तर समृद्धि को प्राप्त हो रहा है। तथा सहृदय-हृदय-संवेद्य होने के साथ-साथ नवीन विधानों, शिल्पों, विषयों तथा विधाओं को आत्मसात करता हुआ दिखलायी पड़ता है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य का प्रारम्भ अधिकांश विद्वानों ने अठारहवीं शती को स्वीकार किया है। आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र संस्कृत के आधुनिक काल का प्रारम्भ विलियम जोंस द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अंग्रेजी अनुवाद का समय सन् 1784 ई० से स्वीकार करते हैं,¹ तो वहीं आचार्य हीरालाल शुक्ल ने सन् 1835 ई० को संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल

का प्रारम्भ माना है²। आधुनिक काल का यह समय संस्कृत साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त समृद्धि का काल कहा जा सकता है।

इस युग के रचनाकारों ने प्राचीन विधाओं को अपनाते हुए उनके अनुसार रचना तो किया ही किन्तु उनके अतिरिक्त आधुनिक विषयों को आधारित करके राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रभक्त वीरों एवं सामाजिक विषयों जैसे दहेज प्रथा, भ्रष्टाचार, अशिक्षा, बालविवाह आदि विषयों को भी अपनी रचनाओं का विषय बनाने में कोई न्यूनता नहीं दिखलायी, बल्कि साथ ही साथ संस्कृत रचना को अलग पहचान देते हुए परम्परा से हटकर भी अपने लेखन को प्रतिष्ठापित करने में अभिरुचि दिखलाते हुए विशिष्ट विधाओं की रचनायें की।

आधुनिक काल का संस्कृत साहित्य शिल्प दृष्टि, विवेच्य वस्तु, विधा आदि अनेक रूपों में नवीनता एवं बदलाव लिये हुए दृष्टिगोचर हो रहा है। एक ओर जहाँ इसमें प्राचीन महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, कथा आदि विधाओं का 'पुराणामित्येव न साधु सर्वम्' इस सूक्ति के अनुसार यकिनचित काव्य निकषों एवं लक्षणों में परिवर्तन कर साहित्य सृजन किया जा रहा है। वहीं इनके अतिरिक्त लघुकथा, ललित निबन्ध, यात्रावृत्त, उपन्यास, डायरी, विनोद कणिका, स्तोत्रकाव्य, चित्रकाव्य, समस्यापूर्तिपरक काव्य, हाइकू, सीजो, तान्का, गजल, कव्वाली, सोहर आदि अनेकानेक प्राचीन साहित्य से सर्वथा अस्पृष्ट विधाओं की रचना विपुल मात्रा में हो रही है। जो कि वर्तमान में अन्य भाषाओं में हो रहे साहित्य सृजन में कहीं से कम नहीं है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य की ये नवीन विधायें यहां निवेच्य एवं प्रासंगिक हैं-

- 1- **महाकाव्य-** महाकाव्य निर्माण की परम्परा यद्यपि प्राच्य संस्कृत साहित्य में सर्वाधिक थी एवं संस्कृत के विशाल वाङ्मय में उसका प्रमुख स्थान है तथापि आधुनिक रचनाधर्मिता में नवीन सृजन की कई नवीन विशेषतायें परिलक्षित होती हैं। एक ओर जहां ऐतिहासिक, पौराणिक आदि विषयों को नवयुगीन कल्पना के संयोजन के साथ प्रस्तुत किया गया जैसे हर्षदेवमाधव रचित बृहन्नला महाकाव्य में नवीन विषयवस्तु, उपादान एवं कहानियों को प्रस्तुत कर नवीनता भी प्रदान कर किया गया। जैसे धरडीमल्लिकार्जुन ने वसवेश्वर को नायक बनाकर वसदवेश्वर महाकाव्य प्रस्तुत किया हो या अम्बिकादत्त शाण्डिल्य ने चचवंश महाकाव्य की रचना की हो अथवा नारी के संघर्ष की कहानी को व्यक्त करता

हुआ पूर्णचन्द्रशास्त्रीविरचित अपराजितावधू महाकाव्य हो। इस सरणि के अग्रदूतों में प्रो० राजेन्द्र मिश्र, पुष्पा दीक्षित, रेवा प्रसाद द्विवेदी, पण्डिता क्षमाराव, विश्वेश्वर पाण्डेय, राम पाणिपाद आदि प्रमुख महाकाव्यकार हैं।

आधुनिक महाकाव्यकारों ने वर्तमान समय के अनुसार महाकाव्यनिर्माण में अनेक परिवर्तन किये। आचार्य जगन्नाथ पाठक के शब्दों में- आधुनिक कवियों ने महाकाव्य विधा को अपनी प्रतिभा के आधार पर युगानुरूप कुछ परिवर्तित एवं कुछ सम्मार्जित करने का भी प्रयास किया। उसने कल्पनालोक में उड़ान भरने की अपेक्षा वास्तविक जगत के सुख दुःख के अनुगुम्फन को अधिक प्रश्रय दिया और मानवीय संवेदना के स्तर पर भी समधिक जागरूकता दिखायी। इस प्रकार परम्परागत रूढ़ियों से कुछ मुक्त होकर आधुनिक संस्कृत कवि ने महाकाव्य विधा में लेखन को एक नये आयाम में प्रस्तुत किया।³

बीस सर्गीय मौर्यचन्द्रोदयम् महाकाव्य में राष्ट्र को परिभाषित करते हुए कविवर प्रभुदत्त स्वामी राष्ट्रीय चेतना को व्यक्त करते हुए दिखलायी पड़ते हैं-

तद् भूखण्डं वाद्रयो वा दिशो वा नैतद् राष्ट्रं राष्ट्रविज्ञा दिशन्ति,
भाषाभक्तिः सभ्यता संस्कृतिश्चेत्येत् प्राणं राष्ट्रमाहुश्चिरत्नाः।
जातिधर्मो जातिधर्मप्रसूता भाषा भक्तिः सभ्यता संस्कृतिश्च,
एतैस्तत्त्वै प्राणितां मातृभूमिं राष्ट्रं प्राहू राष्ट्रतत्त्वार्थविज्ञाः।⁴

जाति, धर्म तथा जाति धर्म से उत्पन्न भाषा, भक्ति, संस्कृति और सभ्यता इन तत्वों से प्राणित मातृभूमि को राष्ट्र के तत्वज्ञ लोग राष्ट्र कहते हैं।

इस प्रकार आधुनिक संस्कृत साहित्य में महाकाव्य विधा भी नवीन उद्भावनाओं को जन्म देती दिखलायी पड़ती है।

2- **लघुकाव्य-** संस्कृत के प्राचीन साहित्य में लघुकाव्य विधा का समुल्लेख प्राप्त नहीं होता है किन्तु उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी में महाकाव्य, खण्डकाव्य एवं गीत के बीच की एक भिन्न विधा वैविध्यतापूर्ण काव्यों के रूप में दिखलायी पड़ती है जो खण्ड काव्य या स्फुटकाव्य की भांति होते हुए भी यत्किंचित उससे भिन्न है। संस्कृत के इस अर्वाचीन युग में ऐसे काव्यों की संख्या अत्यधिक है। ऐसे लघुकाव्य आधुनिक समाज में घटित

होने वाली घटनाओं, भिन्न परिस्थितियों एवं युगानुरूप मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में रची गयी हैं इन काव्यों को निम्न प्रकार से विवेचित किया जा सकता है-

लहरी काव्य के नाम से संस्कृत लघुकाव्य की एक तकनीकी विधा जो विषय पर आधारित न होकर रचना वैशिष्ट्य पर आधारित होती है,⁵ की अनेकानेक रचनायें परिलक्षित होती हैं इन लघु काव्यों के नाम तत्तद्विषयों के साथ लहरी शब्द जोड़कर रखे गये हैं। इन लहरी काव्यों में पण्डिताक्षमाराव विरचित मीरा लहरी, मेधाव्रतकृत दयानन्दलहरी, श्रीधर भाष्कर वर्णकरकृत मातृभूमिलहरी, राधावल्लभ त्रिपाठी विरचित लहरीदशकम् प्रमुख हैं।

राष्ट्रभक्ति को आधारित कर राष्ट्रभक्ति परक काव्यों की रचनायें इस अर्वाचीन संस्कृत युग में बहुतायत में हुई। इनमें वासुदेवशास्त्रीकृत क्रान्तियुद्धम्, पण्डिताक्षमारावकृत 'सत्याग्रहगीता', 'स्वराजविजयः', शिवदत्तमिश्रकृत 'भारतवर्षः', पं० यज्ञेश्वरशास्त्रीकृत 'भारतराष्ट्ररत्नम्' बालकृष्णभट्टकृत 'स्वतन्त्रभारतम्', डा० रमाकान्त शुक्लकृत 'भाति में भारतम्' आदि हैं। जैसे-राष्ट्रगौरव के भावको मन्दाक्रान्ता छन्द में व्यक्त करते हुए शिवप्रसादभारद्वाज भारतसन्देश काव्य में इस रूप में व्यक्त करते हैं-

देशः सोऽयं विदितमहिमा योनिराश्चर्यभूम्ना।

क्षोणीचूणाभरणशिखर स्फारहीरायमाणः॥

यस्मिन्नन्धं तम उपचितं छिन्नविज्ञानरेखं।

छिन्दन् मित्रो पर इव परं ज्योतिराविर्बभूव॥⁶

देवस्तुतिपरक काव्य के रूप में देवताओं की आराधना करके की जाने वाली स्तुतियों के रूप में विराजमान लघुकाव्य भी इस युग की रचना के रूप में दर्शित होते हैं। इनमें सत्यव्रत शर्माकृत 'श्रीयुगलशतदलम्', अभिराजराजेन्द्रमिश्रकृत 'पराम्बाशतकम्' आदि प्रमुख हैं।

पुराकथाश्रित काव्य के रूप में ऐसे काव्यों का परिगणन किया जा सकता है जो प्राचीन कथानकों, ऐतिहासिक एवं पौराणिक कहानियों को आधार बनाकर रचे गये हैं। जैसे हेमचन्द्रराय कृत 'परशुरामचरितम्' स्वयंप्रकाशशर्माकृत 'इन्द्रयक्षीयम् काव्यम्', श्री मि० वेलणकर प्रणीत 'विष्णुवर्धापनम्' काव्य आदि।

लघुकाव्यों की इसी परम्परा में सामाजिक समस्याओं को आधारित करके विरचित काव्यों को सामाजिक समस्यामूलक काव्यों की एक श्रेणी में रखा जा सकता है जैसे आतङ्कवाद को आश्रित करके डा० उमाकान्त शुक्ल विरचित काव्य 'कूहा', स्त्री शिक्षा को आश्रित कर सरोजिनी देवीकृत 'स्त्री शिक्षालयम्' सामाजिक समस्या को उद्घाटित करता व्योमशेखरकृत काव्य अग्निजा आदि।

इसी प्रकार कुछ लघुकाव्य प्रकृति वर्णन को आश्रित करके लिखे गये जिन्हें प्रकृतिवर्णनपरक काव्य की श्रेणी में रखा जाता है। इनमें श्री रामनारायण त्रिपाठी कृत ऋतुविलासः, श्री सुन्दरराजकृत 'सुरश्मिकाश्मीरम्' लक्ष्मण सिंह अग्रवाल कृत 'कुटुम्बिनी' आदि काव्यों की दीर्घ परम्परा है।

अन्योक्ति परक काव्य काव्य के रूप में काव्यकारों ने अन्योपदेश की रीति अपनाकर व्यंग्य के रूप में अपनी बात को समाज तक पहुंचाने का कार्य किया है। ऐसे काव्यों में मथुरा प्रसाद दीक्षितकृत 'अन्योक्तितरङ्गिणी', आ० अभिराजराजेन्द्रकृत 'आर्याअन्योक्तिशतकम्', रामकरणशर्माकृत 'वीणा' आदि प्रमुख हैं।

इसी क्रम में हास्यव्यङ्ग्य को आधारित करके कुछ लघुकाव्यों की रचना भी दृष्टिगोचर होती है जिनमें शैतवाचार्यकृत 'कपीनामुपवासः', प्रशस्यमित्रशास्त्रीकृत हासविलासः, बनेश्वर पाठक कृत 'हीरोकाव्यम्' आदि प्रमुख हैं।

संस्कृत काव्य निर्माण के आधुनिक युग में विदेशी एवं भारतीय भाषाओं में रचे गये साहित्य को संस्कृत भाषा में अनुवाद कर काव्य अथवा गद्य की रचना भी नई विधा के रूप में विकसित हुई है। अनुदित काव्यों के इस क्रम में उमर खय्याम की रूबाइयों का पं० गिरिधर शर्मा द्वारा किया गया अनुवादित काव्य 'अमरसूक्तिसुधाकर', अंग्रेजी कविताओं का वी० सुब्रह्मण्यम् द्वारा किया गया संस्कृतानुवाद 'पद्यपुष्पाजलि' कवि बिहारी की सतसई का प्रेमनारायण द्विवेदीकृत संस्कृतानुवाद 'सौन्दर्यसप्तशती' आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार लघुकाव्यों की अर्वाचीन संस्कृत रचना में सुदीर्घ परम्परा दिखलायी पड़ती है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में वैश्विक चेतना को आधारित करते हुए राष्ट्रेतर विषयों को भी साहित्य सर्जना का विषय बनाया गया है जिससे संस्कृत साहित्य भारत से इतर के राष्ट्रों, स्थलों, वैदेशिकों को भी अपने साहित्य में समेकित करने का प्रयास करता हुआ दिखलायी

पड़ता है 'सनातन कवि' रेवा प्रसाद द्विवेदी ने नेल्सनमण्डेला के जीवन के अंश पर आधारित 'शकटारम्' खण्डकाव्य प्रणीत किया है तथा इसी प्रकार बुद्ध की प्रतिमाओं को तालिबान शासकों के द्वारा तोड़ने से आहत होकर सनातन कवि ने 'सुगतो ब्रवीति' काव्य की रचना की है।⁷ आचार्य सत्यव्रत शास्त्री ने थाइलैण्ड देश की संस्कृतिविलास को लेकर थाईविलास नामक काव्य रचना किया है। इसी प्रकार पेरिस को आश्रित करके आचार्य ओमप्रकाश पाण्डेय ने 'रसप्रियां पेरिस राजधानी' नामक ग्रन्थ की रचना की है। 'अयि नीलनदि' नामक काव्य की रचना सनातन कवि ने देहात्मवाद के पाश्चात्य सिद्धान्त को खण्डित करने के लिए किया है। इस प्रकार संस्कृत की आधुनिक रचना विश्वसंस्कृति को अपने अंक में समेटने को उद्यत है।

नवीन काव्य विधाओं में यात्रावृत्तान्तकाव्य, पत्रकाव्य, चरित्रकाव्य, अवदानकाव्य, तीर्थकाव्य, निर्वाचनकाव्य, विश्वप्रतिक्रियाकाव्य, दैनन्दिनीइतिवृत्तकाव्य आदि की विशिष्ट रचनायें आधुनिक संस्कृत सृजन को समृद्ध कर रहे हैं।

चरित्रकाव्य जैसे शिवराज्योदयम् (श्रीधरभास्कर वर्णकर), गांधीचरितम्, श्रीनेहरूचरित्रम् (पं० ब्रह्मानन्द शुक्ल), इन्दिरागान्धिचरितम् (डा० सत्यव्रतशास्त्री)⁸ आदि काव्यों में कवियों ने चरितनायक के सम्पूर्ण जीवन चरित को प्रकाशित करने का कार्य किया है।

यात्रावृत्तान्त काव्यों में पं० वासुदेव द्विवेदी शास्त्री द्वारा विरचित 'अद्यापि अमेरिका' आचार्य राधाबल्लभत्रिपाठी विरचित 'आत्मनाऽऽत्मानम्' आदि प्रमुख हैं। इसी प्रकार प्रो० सत्यव्रतशास्त्री विरचित दो भागों में लिखित पत्रकाव्य तथा अवदानकाव्य में रेवाप्रसादद्विवेदी विरचित रत्नस्वरूपावदान काव्य, हरिहरावदानकाव्य, एवं जयेन्द्रसरस्वती पादावदानकाव्य ये तीन नवीन काव्य धारा के सम्पोषक हैं।

काव्य की इन्हीं नवीन विधाओं में आचार्य रहसबिहारी द्विवेदी विरचित तीर्थभारतम् नामक तीर्थकाव्य, सनातन कवि रेवाप्रसाद द्विवेदी विरचित सप्तर्षिकाङ्ग्रेसम् नामक निर्वाचनकाव्य,⁹ शकटारम्, सुगतोब्रवीति आदि विश्वप्रतिक्रियाकाव्य¹⁰ तथा बालकथा साहित्य के रूप में कान्तारकथा¹¹ (प्रो० राजेन्द्र मिश्र) एवं अभिनवशुकसप्तति (प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी) आदि सर्जनार्थ प्राच्य रचनाओं से विभिन्न रूपों में नयापन समेटे हुए दिखलायी पड़ती हैं।

प्रतीकात्मक गीतिकाव्य

गीतिकाव्य के नवीन आयामों में प्रतीकात्मक गीतों की रचना नवीन उद्भावना है। यद्यपि प्रतीकात्मक नाटकों की रचना कृष्णमिश्र तथा अश्वघोष आदि महाकवियों के द्वारा यदा कदा दिखलायी पड़ती है किन्तु खण्ड काव्य अथवा गीतिकाव्य का निर्माण नहीं दिखलायी पड़ता है। आधुनिक साहित्य में काशीहिन्दूविश्वविद्यालय के दर्शन विभाग में प्राध्यापक रहे आचार्य चन्द्रधर शर्मा द्वारा रचित 'श्रद्धाभरणम्' को प्रतीकात्मक काव्य की श्रेणी में परिगणित किया जाता है जिसमें 151 पद्यों में मानव, श्रद्धा तथा इडा इन तीन पात्रों के माध्यम से जीवनदर्शन की झांकी प्रस्तुत की गयी है। इसी प्रकार आचार्य बनमाली भारद्वाज ने अपने प्रतीकात्मक काव्य 'मिलिन्दमित्रम्' में भ्रमर को प्रतीक बनाते हुए उसके माध्यम से इहलौकिक जगत को नश्वरता एवं उससे विमुक्त होने के विषय को मुख्य विवेच्य बनाते हुए काव्य निर्माण किया है।

संगीतिका

रागकाव्य की भांति एवं इसके गुणों से समन्वित 'संगीतिका विधा का सूत्रपात आधुनिक साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। संगीतिका मुख्य रूप से अभिलेख काव्य है किन्तु उसके श्लोकों की गेयता की प्रधानता के कारण श्रव्यकाव्य के रूप में इसे जाना जाता है। आचार्य श्रीधरभास्कर वर्णेकर जो कि शिवराज्योदयम् महाकाव्य के प्रणेता हैं, उन्होंने श्रीरामसङ्गीतिका एवं श्रीकृष्णसङ्गीतिका नामक सङ्गीतिकाओं की रचना की है। इसी प्रकार वनमाला भवालकर ने 'रामवनगमनम्' एवं 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' नामक दो संगीतिकाओं की रचना की है। संगीतिका नामक इस विधा को पाश्चात्य साहित्य में 'आपेरा' के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

विमानयात्रा साहित्य

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य की, संस्कृत रचनाकारों द्वारा विमान में यात्रा करते हुए किये गये अनुभवों को चित्रित करने की प्रक्रिया एक नवीन विधा के रूप में प्रस्फुटित हुई है जिसमें विमान यात्रा के अनुभवों को अत्यन्त काव्यात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र द्वारा रचित 'विमानयात्राशतकम्' में विमान यात्रा करते समय हुए

अनुभव का हृदयग्राही वर्णन है, इसी प्रकार आचार्य वेङ्कट राघवन् की कविता 'अभ्रमभ्रमभ्रविलायम्' तथा प्रभाकरनारायण कवठेकर की 'विमानवातायवात्, आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी की 'धरित्रीदर्शनलहरी' आदि विमानयात्रा के अनुभवों को प्रकाशित करती एवं विशिष्ट सौन्दर्यानुभूति कराती हुई उत्कृष्ट रचनायें हैं।

गीत

संस्कृत के इस आधुनिक काल में गीतियों का लेखन बहुतायत में परिलक्षित होता है। इन गीतों पर जयदेव विरचित गीत गोविन्द की छाप कम बल्कि पाश्चात्य गीतियों (लीरिक) का अधिक प्रभाव दिखलायी पड़ता है। उन्नीसवीं शदी से राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत गीतों की परम्परा दिखलायी पड़ने लगती है। राष्ट्र में स्वतंत्रता आन्दोलन के स्वर से प्रभावित होकर राष्ट्रीय भावना प्रधान गीतों की सर्जना विभिन्न विदग्गण करना प्रारम्भ कर देते हैं। अन्नदाचरण तर्क चूणामणि पराधीनता के दुःख को अपने शब्दों में व्यक्त करते हुए एवं वन विहग को सम्बोधित करते हुए लिखते हैं-

धन्यस्त्वमेव विहग स्वत एव विश्व, संसारबीजमनिशस्मरणीय कीर्तिम्।

गायन पुन पुनरहो विचरस्यजसं, स्वाधीनता शुभविभूषणभूषितः सन्॥¹²

हे पक्षी तू ही धन्य है जो तू स्वाधीनता के शुभ अलंकरण से विभूषित होकर स्वतः सदा स्मरणीय कीर्तिवाले, संसार के बीज भगवान का गुणगान करता हुए विचर रहा है।

गीत रचना के क्षेत्र में भट्टमथुरानाथ शास्त्री और जानकीबल्लभशास्त्री का विशेष योगदान है। इसके अतिरिक्त आधुनिक गीतों में पं० रामावतार शर्मा जी द्वारा रचित भारत वन्दना राष्ट्रगीत का श्रेष्ठ ग्रन्थ है। इसी प्रकार कपाली शास्त्री द्वारा रचित 'भारतीस्तवः' प्रासंगिक गीत रचना है।

इसी प्रकार सामाजिक गीतों के प्रचलन भी आधुनिक संस्कृत साहित्य में विविधस्थलों पर दृष्टिगोचर होते हैं।

इसी प्रकार आधुनिक साहित्य में डा० हर्षदेव माधव ने विदेशी छन्दों को संस्कृत में अवतरित करते हुए नवीन प्रयोग किया है जैसे जापान के 'हाइकू' छन्द जिसमें तीन पदों में 17 (सत्रह) वर्ण होते हैं। एवं 'तांका' छन्द जिसके अन्तर्गत पांच पदों में 31 (एकतिस) वर्ण होते हैं, का

सफल प्रयोग कर नवीन रचनाधर्मिता को प्रस्तुत किया है। ताड़का का एक उदाहरण यथा द्रष्टव्य है-

आभुपुष्पिता/बोगमपुष्पलता/गन्धरहिता/
यथा हि अर्वाचीना/प्रसूताऽस्ति सभ्यता)।¹³

इसी प्रकार कोरियाई साहित्य में प्रचलित शिंजो छन्द (जिसमें तीन पदों में 48 वर्ण होते हैं) का संस्कृत में प्रयोग कर आचार्य ने संस्कृत रचनाधर्मिता को समृद्ध किया है। अनेक रचनायें तो मानचित्रों तथा चित्राकृतियों पर आधारित करके लिखी गयी हैं। जो संस्कृत के चित्रकाव्य परम्परा को नये आयामों में प्रस्तुत करते दिखलाई पड़ती हैं। अलकनन्दा काव्य संग्रह की पंक्तियां 'नगरम्' यथा द्रष्टव्य हैं-

सूरदासरूपेण/इन्द्रनगरम्/स्खलिनतपदं भ्रमति।/
बुद्धस्य भिक्षापात्रे/निमज्जितम्/अणुबोम्बद्गधनगरम्।¹⁴

इसी प्रकार तेलगु भाषा के लोक प्रचलित छन्दों को संस्कृत में ग्रहण करते हुए दक्षिण भारतीय विद्वान् श्री भाष्यम् विजयसारथि ने अनेकानेक रचनाओं को सर्जित किया।

आधुनिक संस्कृत की रचनाओं एवं रचनाकारों के इसी क्रम में वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने संस्कृत के विभिन्न गीतों की रचनाओं के साथ-साथ अंग्रेजी साहित्य की प्रसिद्ध गीत विधा सानेट (जिसमें कुल चैदह (14) पंक्तियां होती हैं) को संस्कृत गीत में अभिगृहीत करते हुए रचनायें की एवं उन्हें 'संस्तबक' नाम दिया। आपके कलापिकर (1969) नामक काव्य संग्रह में संस्तबक विधा की रचनायें संयोजित हैं इन रचनाओं में विषयवस्तु की दृष्टि से नयापन दिखलायी पड़ता है। तनुतीर्थम् शीर्षकान्वित् संस्तबक में मानव शरीर को तीर्थ के रूप में प्रस्तुत करते हुए सांगरूपक का उदाहरण द्रष्टव्य है-

रात्रिन्दिवं मे देहमन्दिरेऽस्मिन् सञ्जिजन्त्य विदेहरूपं।
पूजार्चनार्थं वर्तते हि चेतो देव्या ननु वाञ्छितायाः॥
प्रज्ज्वाल्यदीपं कल्पना प्रतीकं स्निग्धञ्च हृदयार्तिधूपं॥
हुत्वा च तस्यै प्रेमचन्दनाक्तं पुष्पं मे कामनायाः॥¹⁵

गलज्जलिका (ग़ज़ल)

फारसी एवं उर्दू भाषा में प्रसिद्ध ग़ज़ल के नाम से विख्यात गीत विधा को भी आधुनिक संस्कृत रचनाविधाओं में गलज्जलिका के नाम से विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ।

जिससे संस्कृत साहित्य वाङ्मय में एक नवीन विधा के रूप में श्री वृद्धि हुई एवं इसे संस्कृत काव्य की विशेषता के रूप में देखा जाता है- “फारसी या उर्दू काव्य परम्परा के छन्दों का संस्कृत कविता में अवतरण बीसवीं शताब्दी के संस्कृत काव्य की एक विशेषता है।”¹⁶

अंग्रेजी शासनकाल में जयपुर निवासी तथा फारसी एवं संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री संस्कृत में गलज्जलिका को प्रतिष्ठित करने वाले प्रथम विद्वान् माने जाते हैं।

उन्होंने 1927 ई० में प्रकाशित होने वाले अपने गीत संग्रह ‘गीतवीथी’ में उर्दूभाषाचत्वर नामक खण्ड में एवं ‘साहित्य वैभव’ नामक काव्यसंग्रह में ग़ज़ल गीतियों का संकलन प्रस्तुत किया। साथ ही साथ ब्रजभाषा के छन्दों, दोहा, सोरठा, कवित सवैया, आदि नवीन विधा की रचनाएँ भी की। इसके पश्चात् आचार्य बच्चूलाल अवस्थी ने अपने ग़ज़ल रचना से इस विधा को विकसित किया उनके गलज्जलिका में भाव एवं शिल्प का विशिष्ट समन्वय देखने को मिलता है-

पिका: मौनं भजेरन् मासि वासन्ते कथं कारकम्?

शरः शकुन्तलः सिद्ध्येन्न दुष्यन्ते कथं कारकम्?

भुवोभङ्गभ्रमाद् भूम्ना निषेधाः सम्प्रतीयेरन्

कपोलप्रान्त सङ्केता निगूह्यन्ते कथं कारकम्?

सहेला हावभावा विभ्रमा इन्द्रायुधीयन्ते

निराकाराश्चमत्कारा न सह्यन्ते कथं कारकम्।¹⁷

बसन्त मास में कोकिल कैसे मौन धारण कर लें?

शकुन्तला का बाण दुष्यन्त पर कैसे न सफल हो? भृकटिभङ्ग के भ्रम से निषेध अधिक मात्रा में भले ही प्रतीत हो जाए किन्तु कपोल के प्रान्त भाग के सङ्केत कैसे छिपेंगे?

हेलासहित हावभाव तथा विलास इन्द्रायुध जैसा आचरण करते हैं, निराकार चमत्कार कैसे नहीं सहन होते हैं?

प्रस्तुत उदाहरण में वासन्ते, दुष्यन्ते आदि काफिये तथा कथङ्कारकम् रफीद का संयोजन अत्यन्त आकर्षक है। इसके पश्चात् आ० जगन्नाथ पाठक ने सूक्ष्म भावाभिव्यञ्जना एवं मनोवेदना तथा हृदय को छू लेने वाले गजलों की रचना के द्वारा इस साहित्य को संबर्धित किया।

इसी क्रम में आचार्य राधाबल्लभ त्रिपाठी के गजल गीतों में शिल्प एवं भाव का उत्कृष्ट संगम देखने को मिलता है उनके गीतों एवं गजलों में विषयवस्तु की नवीनता एवं भावप्रवणता, कल्पना की प्रमुखता, आधुनिक सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों की विसंगतियों का व्यंग्यपूर्ण चित्रण तथा जनमानस में विराजमान भावों का हृदयहारी वर्णन प्राप्त होता है।

इसी प्रकार प्रसिद्ध विद्वान् आ० अभिराजराजेन्द्रमिश्र उर्दू फारसी की गजल विधाओं पर आधारित करके संस्कृतगलज्जलिका की धारा प्रवाहित कर रहे हैं। उनके गजलगीतियों में रफीद और काफिये का संयोजन आकर्षक एवं प्रभावपूर्ण होता है। अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ अभिराजयशोभूषण में उन्होंने गजल के विषय में अत्यन्त सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है।

मिश्र जी के गलज्जलिकाओं में प्रवाह एवं वस्तु की गहराई अत्यधिक रूप में दृष्टिगोचर होती है। उनकी कृति शालभञ्जिका (गजलों का संकलन) से यह उदाहरण द्रष्टव्य है-

सत्यरक्षणेयत्नपरः श्रुतिकटुदोषगिरोऽहम्।
शक्तिर्मिता धराऽनन्ता धावन्धावन् स्थिरोऽहम्॥
चरितं दृष्ट्वा पुरोधसां परित्यक्त मन्दिराऽभवम्।
रक्तं लिखितं भाललिपौ यतः कालिकाऽजिरोऽभवम्।
अभिराजशारदाऽऽत्मजः रसगुणधमनी शिरोऽभवम्॥¹⁸

सत्य की रक्षा में प्रयत्न करने वाला मैं भाषा का श्रुतिकटुदोष (नित्य एवं अक्षम्य) बन गया हूँ। पृथ्वी का ओर छोर नहीं और यात्रा की मेरी सामर्थ्य सीमित है। अतः दौड़ते दौड़ते मैं खड़ा ही हो गया। पुरोहितों को (दुः) चरित्र देखकर मैंने मन्दिर ही जाना छोड़ दिया। मेरी तो ललाट लिपि में ही रक्त लिखा था क्योंकि मैं महाकाली मन्दिर का आंगन था। अपूर्ण अधूरा

रह जाने से भी मेरी क्या हानि? क्योंकि मैं तो शिव के मस्तक की चन्द्रकला हूँ। मैं हूँ अभिराज! भगवती शारदा का पुत्र, मेरी तो शिरा और धमनियों में भी रस और गुण विद्यमान हैं।

गजल के अन्य रचनाकारों में आ० जनार्दन प्रसाद पाण्डेय इच्छाराम द्विवेदी, जगन्नाथ पाठक, पं० महाराजदीन पाण्डेय, पुष्पा दीक्षित, विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र आदि प्रमुख हैं। आ० विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र की एक गजल का उदाहरण द्रष्टव्य है-

वदविधुवदने त्वदीयमानसे कथं गीतिः?

अपरिचितं कलयसि मयि प्रणयिनि, का संशीतिः?

किं त्वया पीतमिदं मैरेयं नाद्य रूद्धासि देहलीषु साम्प्रतं हि देवि

‘देहली’-संस्थिता तथापि ते न सम्प्रीतिः॥¹⁹

हे चन्द्रमुखी बोल, कैसा तेरे मन में डर है? हे प्रणयवाली कैसे मुझे अपरिचित समझ रही हो? मेरे प्रति कौन सा सन्देह है? क्या तूने इस मदिरा का पान कर लिया है? अब तू देहलियों में बन्द नहीं है, ‘देहली’ में संस्थित है तब भी तेरी सम्प्रीति नहीं है?

आचार्य विन्ध्येश्वरी प्रसाद जी ने अपने छोटे-छोटे अनुष्टुप आदि छन्दों के माध्यम से प्रेम एवं रूमनियत का गम्भीर चिन्तन प्रस्तुत कर दिया है जो सहृदय पाठक तक पहुँचकर हृदय को स्पर्श कर लेता है। इसी प्रकार अन्य कवि भी गलज्जलिका विधा के द्वारा संस्कृत के अर्वाचीन रचना संसार को पुष्पित एवं पल्लवित कर रहे हैं।

लोकगीत

संस्कृत के नवीन विधाओं के अन्तर्गत विभिन्न लोकगीतों की रचनायें इसके साहित्य को समृद्ध कर रही हैं। इन लोकगीतों में कजरी गीत फाल्गुनिक (फगुआ), रसिक (रसिया), चैत्रक (चैता), सूतगृहगीत (सोहर) आदि प्रमुख हैं। कुछ प्रमुख लोक गीत विधाओं का विवेचन यहां प्रासंगिक है।

कज्जलिका (कजरी)

वर्षा ऋतु के आगमन होने पर परदेश में विद्यमान पति से दूर होकर स्त्रियां पतिविरह में उलाहने के रूप में कजरी गीतों का गायन करती हैं।²⁰ जिसका अधिकांश प्रचलन उत्तर प्रदेश के विन्ध्य, काशी, कोशल आदि क्षेत्र एवं बिहार के कुछ स्थलों पर दिखलायी पड़ता है हिन्दी कजरी लोकगीतों की परम्परा की भाँति आधुनिक संस्कृत रचना में भी इस विधा का सूत्रपात दृष्टिगोचर होता है। आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र इस विधा के श्रेष्ठ कवि हैं। उनकी रचना वाग्वधूटी काव्य संग्रह का कजरी का एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

रौंति कोकिला मदालसा रसालतरौ,
गोपिता तमाल तरौ रे।
क्षणं पल्लवे निलीय म'जरीरसं निपीय
स्तौति सम्मुखं वसन्तकं रसालतरौ गोपिता तमालतरौ रे।²¹

मद में अलसाई तथा तमाल की शाखाओं में छिपी छिपी कोकिला आम के पेड़ पर कूक रही है। कभी आमपल्लवों में छिपकर, म'जरियों का रसपान करती, चैतरफा पसरे वसन्त का मानो अभिवादन कर रही है। इसी प्रकार कजरी गीतों के अन्य उदाहरणों एवं रचनाकारों से संस्कृत वाङ्मय समृद्धता को प्राप्त हो रहा है।

फाल्गुनिक

होलिकोत्सव के उपलक्ष्य में फाल्गुन मास के महीने में घर-घर में चैताल आदि भेदों वाला फाग (फगुआ) गाया जाता है। इसलिये कुङ्कुम और अबीर मलने से आनन्द एवं मंगल बढ़ाने वाले तथा हर्ष सम्भार से ओतप्रोत इस गीत को होली गीत भी कहते हैं।²²

फाल्गुनिक विधा की रचनाओं का सर्वाधिक कार्य आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र के द्वारा दिखलायी पड़ता है उन्होंने समाज के मन की भावनाओं को ग्रहण करते हुए गीतों के माध्यम से आनन्द का संचार कर दिया है जिससे उत्सव का उल्लास दुगुना हो जाता है। फाल्गुनिक का उदाहरण जैसे उनके काव्य संग्रह मृदुवीका में द्रष्टव्य है-

करकमले लसतिपिचकारी, विहरति मुरारिः।
न हि रक्षति परिचयं न शीलम्, पश्यति न वयो गिरधारी।
विहरति मुरारिः॥
नयनसमक्षं मिलति य एव रजयति तमेव विहरी
विहरति मुरारिः॥²³

कमल जैसे कोमल हाथों में पिचकारी शोभित हो रहा है और श्रीकृष्ण क्रीड़ा कर रहे हैं। (शरारती) कृष्ण न परिचय की परवाह कर रहे हैं नाही अपने शील अर्थात् मर्यादा की। गिरधारी कृष्ण किसी की अवस्था भी नहीं देख रहे हैं। जो कोई भी आंखों के सामने दिखलायी पड़ जाता है बिहारी कृष्ण उसी को रंग से सराबोर कर दे रहे हैं। कृष्ण क्रीड़ा कर रहे हैं।

इसी प्रकार अन्य कवियों ने भी फाल्गुनिक विधा की रचना कर संस्कृत को समृद्ध किया है।

रसिक (रसिया)

श्रीकृष्ण तथा राधा को आश्रित करके रासोत्सव को उपलक्ष्य कर शरदऋतु की आगवानी में बृजमण्डल में रसिया (रसिक) गीत को गाया जाता है-

रासोत्सवं समालक्ष्य मुकुन्दराधिकश्रितम्।
रसिकं गीयते प्रीत्या ब्रजेषु शरदागमे॥²⁴

इन गीतों में श्रीकृष्ण के विभिन्न कार्यकलापों, भावभंगिमाओं एवं झांकियों का चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। आधुनिक कवियों में बाबूराम अवस्थी, हरिदत्त शर्मा, अभिराजराजेन्द्र मिश्र आदि ने इस नवीन विधा की रचना से आधुनिक काव्य संसार को वर्धित किया है।

आचार्य बाबूराम अवस्थी द्वारा विरचित एक रसिक गीत उदाहरण के रूप में द्रष्टव्य है-

मङ्गलदिनमिदमद्य शिशुर्गहे खेलति रे
ए हो शीघ्रं चल सखि! नन्दभवनमभिनन्दतिरे॥
श्यामश्चलित सलीलंपतति भुवि तिष्ठति रे
ए हो नृत्यति लसति कदापि हसति बहु रोदिति रे॥²⁵

आज है यह मंगलमय दिन (क्योंकि) शिशु क्रीडा कर रहा है अरी सखि! शीघ्र चलो। बाबा नन्द का भवन सबका अभिनन्दन कर रहा है। श्यामल रंग वाले कृष्ण लीलापूर्वक चलने लगे हैं कभी धरती पर गिरते हैं (तो) कभी उठ खड़े होते हैं। अरी सखि। कभी नाचते हैं, मटकते हैं तो कभी खेलखिला कर हँसते हैं अथवा रोते हैं।

इस प्रकार आधुनिक काव्य परम्परा में कवियों के द्वारा रसिया विधा का सूत्रपात दृष्टिगोचर होता है।

चैत्रक (चैता)

नववर्ष के आगमन एवं वसन्त ऋतु में चैत्र माह के प्रारम्भ होने पर हर्ष एवं आनन्द से परिपूर्ण तथा नई फसल के घर आने पर गार्हस्थ्य वैभव की सूचना देने वाला चैता नामक गीत गाया जाता है इस चैता गीत में कभी-कभी परदेश में गये पति के प्रति प्रेम एवं उलाहना से परिपूर्ण भावनाओं को नवयौवनायें गाकर प्रकट करती हैं। आचार्य अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने चैत्रक को निम्न श्लोकों में व्यक्त किया है-

चैत्रकं गीयते चैत्रे हर्षसम्मोद निर्भरम्।
नवान्नागमसम्भर सम्पदिङ्गितवैभवम्॥
चैत्रकेऽपि क्वचिद् बाला कापिप्रोषित वल्लभा।
व्यनक्ति स्वीयमातङ्कं स्मरजंमार्मिकैः पदैः॥²⁶

आचार्य अभिराजराजेन्द्र मिश्र के द्वारा विरचित प्रोषितभर्तृका नायिका का बागवधूटी काव्य संग्रह में मनोहारी वर्णन द्रष्टव्य है-

विधुमभिसरति कुमुदिनी रे मातः किमु करवाणि?
प्रोषितपतिका विरहिणी रे मातः किमु करवाणि?
पवनो वहति मलयगिरिसूतः रेवातटगतवज्रुलपूतः
वितरति सुममधु नलिनी रे मातः किं करवाणि?²⁷

कुमुदिनी चन्द्रमा के साथ अभिसार कर रही है। हाय री मां! क्या करूँ मैं? मैं हूँ परदेश गये प्रियतम वाली विरहिनी। हाय री माँ! क्या करूँ मैं? मलयपर्वत से जनमा वायु बह रही है जो नर्मदा नदी के तट पर स्थित वज्रुलकजों से पवित्र हो रहा है। कमलिनी फूलों की मदिरा

फैलने लगी है। हाय री माँ! मैं क्या करूँ? इसी प्रकार चैत्रक के अन्य उदाहरण आधुनिक संस्कृत साहित्य में दर्शित होते हैं।

सूत्रगृहगीतम् (सोहर)

पुत्र, पुत्री के जन्म होने पर या विवाह आदि मङ्गल अवसरों पर महिलाओं के द्वारा गाया जाने वाला गीत सूत्रगृह (सोहर) गीत कहा जाता है, इन गीतों में सन्तान एवं उनके माता-पिता अथवा माङ्गलिक उत्सव में सम्मिलित लोगों को आश्रित करके स्त्रियाँ माङ्गलिक वर्णन करती हैं। सूत्रगृहगीत को परिभाषित करते हुए अभिराजयशोभूषण में आचार्य राजेन्द्रमिश्र निम्नवत् लिखते हैं-

पुत्रजन्मविवाहादि मङ्गलावसरे पुनः
गीयते ननु नारीभिर्गीतं सूत्रगृहाभिधम्।²⁸

आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र गीत विधा के श्रेष्ठ कवि हैं उनके काव्यसंग्रह वाग्वधूटी का सूत्रगृहगीत का उदाहरण द्रष्टव्य है-

दुरितानि विधूतानि कुरुते शुभानि साधु विदधाति रे!
गङ्गे तव नीरगाहनं वितनुते विबुधलोकमनुयाति रे!!
कमलारमणचारुचरणाब्ज जनिते त्रिपथगे त्वया!
गङ्गे! विहितं न कस्य पापहरणं मनुजदेवदनुजस्य रे!²⁹

पापों का विध्वंस करता है तथा पुण्यों का भली भाँति सम्पादन करता है तथा मुक्ति प्रदान करता है। भगवान् विष्णु के चरणकमलों से उत्पन्न हे माता त्रिपथगे गङ्गे! तुमने किस देवता मानव अथवा दानव के पापों का विनाश नहीं किया? हे माता गङ्गे! बक, हंस तथा सारस पक्षियों से शोभित, धवल जलराशियों वाले बालुकामय तुम्हारे तटप्रदेश दृष्टियों को बाध लेते हैं। तुम्हारे जलरूपी दर्पण में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा को देखकर हे गङ्गे! ऐसा प्रतीत होता है मानों मानसरोवर की जलराशि में कोई हंस शिशु सन्तरण कर रहा है।

इसी प्रकार अन्य कवियों की रचनाओं में यत्र तत्र सूत्रगृहगीत के दर्शन होते हैं। सूत्रगृहगीत का उत्तर प्रदेश, बिहार आदि राज्यों में विशेष रूप से गान होता है।

स्कन्धहारीय (कँहरवा)

विवाह के पश्चात् बधू की विदाई होने पर पालकी लेकर जाने वाले कहारों के द्वारा कोरस स्वर में स्कन्धहारीय गीत गाया जाता है। मार्ग में होने वाले थकान को कम करने वाला कहारों के द्वारा बारी बारी से गाया जाने वाला तथा पालकी में बैठी बधू का मनोरंजन करने वाला भी होता है।

स्कन्धहारीय को परिभाषित करते हुए आचार्य राजेन्द्र मिश्र निम्नवत् श्लोकायित करते हैं-

वहन्तश्शिनिकां गुर्वीमेवमेव हि वाहकाः
गायन्ति स्कन्धहारीयं समवेतस्वरोच्चयैः
अध्वश्रमापनोदीदं गीयमानं क्रमेण च
स्कन्धहारीयमाख्यातं वधूट्याश्चापि मोददम्॥³⁰

संस्कृत साहित्य के आधुनिक एवं श्रेष्ठ रचनाकार आचार्य राजेन्द्र मिश्र के काव्य संग्रह 'वाग्वधूटी' में एवं मृदुवीका में स्कन्धहारीय के अनेक उदाहरण दर्शित होते हैं। वाग्वधूटी का एक पद्य स्कन्धहारीय के उदाहरण के रूप में द्रष्टव्य है-

नभसि विभाति चमत्कृचन्द्रो भाति चन्द्रमसि छाया
सरसि विभाति सरागकमलिनी कमलिन्यामलिजाया
भाति भवने वधूटी षोडशी सदङ्गना॥³¹

आकाश चमत्कारों से भरा चन्द्रमा शोभा को प्राप्त करता है और चन्द्रमा में काला दाग। सरोवर में शोभा पाती है। लालिमा से भरी कमलिनी और कमलिनी में शोभा पाती है भ्रमर वधू। और भवन में शोभा पाती है सोलहवां साल लगी सुन्दर बहू। यहां कहारों के गीत के माध्यम से नवपरिणीता वधू का अत्यन्त मनोहारी वर्णन किया गया है। अतः स्कन्धहारीय की यह विधा संस्कृत साहित्य का श्रीवर्धन करता है।

प्रचरण (पचरा) गीत

भारत लोकगीत प्रधान संस्कृति एवं आयोजनों वाला देश है। इस कारण मांगलिक कार्यक्रमों में गीतों का आयोजन अवश्य होता है। ऐसे में विवाह आदि अवसरों पर अनेक प्रकार के भावों

एवं कथनों को व्यक्त करने वाले लोकगीत महिलाओं के द्वारा रात्रि में गाये जाते हैं। उन मंगलमय गीतों में भी प्रारम्भ में मंगलात्मक प्रचरणगीत (पचरा) गाया जाता है जो कि समस्त देवताओं को निमन्त्रित करने वाला होता है। चूंकि इन गीतों के माध्यम से घर के मंगलोत्सव कार्य का प्रारम्भ के साथ प्रचार किया जाता है। इसलिए इसे पचरा (प्रचरण) कहते हैं प्रचरणगीत को प्रो० राजेन्द्र मिश्र ने इस प्रकार अपने ग्रन्थ अभिराजयशोभूषणम् में परिभाषित किया है-

समागते विवाहेऽथ विविधाशयभाजि हि
लोकगीतानि गीयन्तेऽङ्गनाभिः प्रायशो निशि
तत्रादौ प्रचरणं तद्दीयते मङ्गलात्मकम्
सर्वदेव कुलगाम देवताऽऽमन्त्रणात्मकम्
यतो ह्यनेन गीतेन प्रचारः क्रियते मुदा
मङ्गलोत्सवकृत्यस्य ततश्चेदं प्रचारणम्॥³²

प्रचरणगीत के विभिन्न उदाहरण आचार्य अभिराजराजेन्द्र मिश्र के काव्य संग्रहों तथा अन्य कवियों द्वारा रचित काव्यों में दिखलायी पड़ते हैं। प्रचरण के उदाहरण के रूप में राजेन्द्र मिश्र जी का एक गीत दशनीय है-

कस्य पादपोऽयमस्ति कस्य वाऽथदोरकं विभातिमज्जुलम्।
का नु दोलनाधिरूढा साम्प्रतं विराजते?
निम्ब पादपोऽयमस्ति, दोरकदुकूलतन्तुभिविनिर्मितम्।
अम्बा दोलनाधिरूढा चण्डिका विराजते॥³³

अर्थात् यह पेड़ किसका है और किसकी बनी यह डोरी शोभायमान हो रही है? और इस झूले पर कौन बैठ कर शोभायमान हो रही है? नीम का यह पेड़ और रेशम की बनी हुई यह डोरी है और इस झूले पर मां चण्डिका शोभित हो रही हैं। इस प्रकार विविध आशयों को ग्रहण करके नृत्यादि के साथ प्रचरणगीतों को गाया जाता है। आधुनिक संस्कृत साहित्य में इन गीतों का निर्माण लोक जनजीवन में प्रस्तुत होकर सभी वर्गों को एकसूत्र एवं संस्कृति में पिरोता हुआ दिखलायी पड़ता है।

नवीन लोकगीत विधाओं के रचनाओं के क्रम में इसी प्रकार रात्रिवेला में ऊँटहारे व्यापारी द्वारा आलस्य दूर करने के लिए गाया जाने वाला औष्ट्रहारिक (ऊँटहारा गीत), उत्सव समाप्ति के बाद गाया जाने वाला उत्थापन (उठान) गीत, (विवाह के पश्चात् गाया जाने वाला) नक्तक (नकटा) गीत तथा बटुक गीत (बरूआ) यज्ञोपवीत के अवसर पर गाया जाने वाला लोक गीत आदि विधाओं की भी रचना आधुनिक संस्कृत रचनाओं में दिखलाई पड़ती है। इन नवीन विधाओं की रचना के माध्यम से संस्कृत का कवि समाज के हर व्यक्ति तक पहुँचकर उसे साहित्य से जोड़ने का प्रयास करता हुआ दिखलायी पड़ता है। जो संस्कृत रचना धार्मिता के लिए शुभसूचक है।

मुक्त छन्द

संस्कृत वाङ्मय के आधुनिक काल में मुक्त छन्दों की रचनायें नवीन विधा के रूप में विकसित हुई। आचार्य पिङ्गल के द्वारा बनाये गये नियमों एवं छन्दरचना के पद्धतियों को छोड़कर-

‘छन्दहीनों न शब्दोस्ति न च्छन्दः शब्दवर्जितम्’।

तस्मात्तुभय संयुक्ते नाट्यस्योद्योत्यके स्मृते।।³⁴

इस भरत आचार्य के कथनानुसार प्रत्येक शब्द में छन्द विद्यमान है, की कल्पना करते हुए आचार्यों ने अनेकानेक मुक्त छन्दों की रचनायें की हैं। उन रचनाओं में आचार्य अभिराजराजेन्द्र मिश्र, केशवचन्द्र दास, हर्ष देव माधव राधावल्लभ त्रिपाठी, भास्कराचार्य त्रिपाठी, देवाप्रसाद द्विवेदी, अमरनाथ पाण्डेय, देवदत्त भाई, वेदकुमारी घई, प्रभाकर नारायण कवठेकर, कमलेश दत्त त्रिपाठी आदि की विशिष्ट रचनायें प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं-

मुक्त छन्द की रचनाओं में आचार्य डा० श्रीकृष्ण लाल के ‘शिंजारवः’ (1954ई०) एवं ‘उर्वीस्वनः’ (1957ई०) नामक रचनाओं का संग्रह भी उल्लेखनीय है, जिसके अन्तर्गत मुक्तछन्द का लय एवं प्रभाव आकर्षण का केन्द्र है। आधुनिक संस्कृत विद्वानों ने काव्य में छन्दोमुक्तता को अशक्ति नहीं माना है अपितु उसमें नैसर्गिक अन्तश्छन्दस्त्व सन्निहित मानकर अत्यन्त श्लाघ्य रचनायें प्रस्तुत की हैं। यथा आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी की सम्प्लव काव्यकृति का प्रस्तुत अंश द्रष्टव्य है-

पलाण्डुच्छेदने निर्गतं नयनयोर्लावण्यमयं वाष्पजलम्
सहैव चैव विच्छूरितं मधुरमधुरं स्थित तथोष्ठयोः
एतद् द्वयमपिसम्मेल्य कटाहे घृतने भज्यत यदा
उतिष्ठति धूमस्तदा कषायमधुरो रसवत्यां
देवानामावाहनं विधत्ते।³⁵

प्याज काटने में नेत्रों से निकला हुआ खारा आँसू और उसके साथ ही साथ होठों पर फैली मीठी-मीठी मुस्कान। इन दोनों को परस्पर मिलाकर जब कड़ाही में घी से छौंक लगायी जाती है तब रसोई में उठता है कषाय मधुर धुआँ जो आवाहन करता है देवों का। छन्दोमुक्त काव्य के अनेकानेक उदाहरण इसी प्रकार नवीन संस्कृत रचना में दिखलायी पड़ते हैं। आचार्य के० राजन्नशास्त्री के एक छन्दोमुक्त काव्य का अंश उदाहरण के रूप में द्रष्टव्य है-

लुब्धानां प्रीतयः, चल चित्राणां गीतयः,
अपरिपक्वमतीनां नीतयः,
अन्यायोपार्जितमुद्राणां स्फीतयश्चितरस्थायिन्यो न भवन्ति।
निशीथेस'चारः, कपट पूर्णव्यवहारः
सुहृदामत्युपचारः विरक्तानां शृङ्गारः शङ्कनीयो भवति।³⁶

अर्थात् लोभियों की प्रीतियां, चलचित्रों की गीतियां, अधकचरी बुद्धिवालों की नीतियां, अन्याय से कमाई गई सम्पत्ति की स्फीतियां चिरस्थायी नहीं होती। आधी रात में संचार, कपटपूर्ण व्यवहार, मित्रों का अत्युपचार, विरागियों का शृङ्गार शङ्कनीय होता है।

इसी प्रकार के छन्दोमुक्त काव्य के विभिन्न उदाहरण अर्वाचीन काव्यपरम्परा में बहुलता से दिखलायी पड़ते हैं। छन्दोमुक्त काव्य की ये रचनायें संस्कृत के समन्वयवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती हुई नवीन विधा की सर्जना को प्रस्तुत करती हुई दिखलायी पड़ती हैं। ये कवितायें पूरी तरह आधुनिकयुगीन वैचारिकी पर आश्रित हैं। एवं आधुनिक मानव जीवन के विभिन्न पक्षों, पीड़ाओं मानसिक द्वन्द्वों, सन्त्रासों एवं भावों को उद्घाटित एवं अभिव्यक्त करती हैं तथा नये प्रतीकों एवं संवेदनाओं को उत्पन्न करते हुए दृष्टिगोचर होती हैं।

गद्यात्मक नवीन विधायें

कथा साहित्य

कथासाहित्य का निर्माण संस्कृत साहित्य में अत्यन्त पुरातन दृष्टिगोचर होता है किन्तु कथासाहित्य की किंचित पुष्पित हुई नवीन विधायें यहाँ विवेच्य हैं। कथा के इन नवीन उपादानों में व्यंग्यकथा, टुप्कथा एवं स्पशकथा विशेषरूप से द्रष्टव्य हैं। व्यंग्यकथा के माध्यम से रचनाकारों ने विविधभावों से हास्य का संचार तो किया ही है साथ ही साथ विविध सन्देशों को भी प्रसारित करने का प्रयास किया है। आचार्य इच्छाराम द्विवेदी की 'हा हा' नामक कथासंग्रह इसी प्रकार की व्यंग्यकथाओं से संयुक्त रचनाओं का संग्रह है जिसमें आचार्य ने छोटी-छोटी कथाओं के माध्यम से हास्य का पुट प्रदान किया है। आचार्य प्रमोद कुमार नायक ने 'उवाचकण्डुकल्याण' नामक अपने ग्रन्थ में व्यंग्यकथाओं का संकलन प्रस्तुत किया है जो अपने व्यंग्यकथाओं के माध्यम से हास्य का संचार करती हैं। स्पशकथा एवं टुप्कथायें सागरिका पत्रिका के गद्यसाहित्यविशेषाङ्क में आचार्य वनमाली विश्वाल के द्वारा रचित नवीन विधा के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं जो कि संस्कृत कथा साहित्य संसार को समृद्ध करती हैं।

नाट्यसाहित्य

यद्यपि संस्कृत नाट्यसाहित्य का इतिहास बहुत पुराना है, या यूँ कहा जाय कि संस्कृत साहित्य के श्रीवर्धन में नाट्यसाहित्य का सर्वप्रमुख स्थान है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। किन्तु आधुनिक नाट्यसाहित्य पूर्व के सदृश होते हुए भी विभिन्न रूपों में भिन्न है तथा इसके नवीन भेद तो नवीन विधा के ही रूप में रचित किये गये हैं। अर्वाचीन नाट्य साहित्य में प्राचीन परम्परा को अपनाते हुए उससे आगे बढ़कर नवीन विधाओं का सूत्रपात किया गया है। जैसे नुक्कड़नाटक, एकाङ्की नाटक, रेडियोनाटक, गीतनाटक आदि, एवं ऐसे नाटकों ने जनसामान्यतक पहुँचने के लिए संस्कृत भाषा को अधिक सुगम बनाने में अत्यधिक योगदान किया। नये नाट्यशिल्पों का विधान किया जाने लगा। नान्दी, भरतवाक्य, प्रस्तावना, प्रवेशक विष्कम्भक आदि की पद्धति लुप्तता की ओर जाने लगी। किन्तु इनके साथ नये विषयों का समावेश भी संस्कृत नाट्यरचनाओं में दिखाई पड़ने लगा। जिस कारण इन नाटकों में नवीनता का बोध होता है।

आधुनिक नाटक आकाशवाणी से भी प्रसारित होने लगे हैं, जिस कारण उनका शिल्प हिन्दी की भांति प्रतीत होता है। आचार्य रमाकान्त शुक्ल विरचित रेडियोनाटक नाट्यसप्तपदम् इसका विशिष्ट उदाहरण है। नाटकों में गीत का बाहुल्य भी गीतनाटक की नवीन विधा प्रस्तुत करती है। वनमाला भवालकरकृत 'रामवनगमन' नाटक इस विधा का प्रमुख नाटक है। नाटकों में पूर्व के प्राकृत भाषा के संवादों के स्थान पर वर्तमान की क्षेत्रीय लोकभाषा का स्थान दिखलायी पड़ता है। आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र के नाटक 'लीलाभोजराजम्' में प्राकृत भाषा के स्थान पर भोजपुरी भाषा का प्रयोग दर्शनीय है-

प्रजेश्वर भोज! वयं कीर्ति ते गायामः।

ग्रामे ग्रामे यतिभ्यश्च वृत्तं ते अभिनन्दामः।

प्रजेश्वर भोज! वयं कीर्तिते गायामः।

राजा भोज रउरी कीरीतिया बखानी।

गावें गावें जो गी गावें तोहरे बानी।

राजा भोज रउरी कीरितिया बखानी।³⁷

इसी प्रकार मिश्रजी के 'चतुष्पदीयम्' नाट्यसंग्रह में संकलित चार एकाङ्कियों में नुक्कड़ नाटक की शैली और संवादों का चुटीलापन संस्कृत नाट्यपरम्परा में नया द्वार खोलता है।

मिश्रजी की व्याकरण शास्त्र को प्रधान रूप से आश्रित कर वाणीघटमेलकम् व्यंग्य प्रधान एकांकी संस्कृत व्याकरण शिक्षण की मानो पाठशाला ही है।

इसी प्रकार नवीन शैली आधारित नाटककारों में यतीन्द्रविमल प्रणीत भारत- हृदयारविन्दम्, भास्करोदयम्, हरिदाससिद्धान्तवागीश प्रणीत बङ्गीयप्रतापम्, वाई महालिङ्गशास्त्री प्रणीत कौण्डिन्यप्रहसनम्, मथुरा प्रसाद दीक्षित प्रणीत भूभारोद्धरणम्, भीमभट्टप्रणीत हैदराबादविजयम्, पं० वैकुण्ठविहारीशर्मा प्रणीत अभिशप्तचन्द्रम् तथा हर्षदेवमाधवप्रणीत मृत्युरयं कस्तूरीमृगोऽस्ति, तथा मेधाव्रत आचार्य का प्रकृतिसौन्दर्यम् आदि प्रमुख हैं।

यद्यपि आधुनिक संस्कृत नाटकों की बहुसंख्यक रचनायें हुई हैं किन्तु अधिकांश कृतियों का यश विस्तारित नहीं हो सका है एवं पाठकों की अल्पसंख्या के कारण भी यह जन जन की पहुँच से दूर दिखलायी पड़ता है। फिर भी इन नाटकों की रचना संस्कृत के नवीन रचनाधर्मिता के लिए शुभसूचक है।

ललित निबन्ध

संस्कृत साहित्य के आधुनिक विधाओं में गद्य सृजन के अन्तर्गत विमर्शात्मक गद्य का इतिहास अत्यन्त पुराना है किन्तु पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में अल्प शब्दों में स्वयं के विचार प्रस्तुत करने स्वरूप, व्यक्तिव्यंजक गद्य साहित्य अथवा ललित निबन्ध नामक विधा पाश्चात्य लेखन की प्रवृत्ति को आत्मसात् करते हुए नवीन साहित्य सृजन के रूप में देखा जा सकता है। ललित निबन्ध वैसे सर्जनात्मक गद्य है जिनमें लेखक स्वयं के विचारों को बिना किसी ऐतिहासिक या पूर्व की वस्तु की समीक्षा करते हुए सृजन करता है। इस विधा में लेखक के स्वयं के स्वतंत्र विचार ही उसकी गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। ललित निबन्धों की सर्जना में पं० हषिकेश भट्टाचार्य का प्रारम्भिक योगदान बहुत अधिक है, विद्योदय पत्रिका में प्रकाशित होने वाले 'उद्भिज्जपरिषद' तथा 'महारपयपर्यवेक्षणम्' आदि प्रारम्भिक श्रेष्ठ ललित निबन्ध हैं। प्रबन्धमंजरी नामक ग्रन्थ में उनके अनेक श्रेष्ठ निबन्ध संकलित हैं। इसी प्रकार भट्टश्रीमथुरानाथशास्त्री जी ने बीसवीं सदी के प्रथम चरण से संस्कृतरत्नाकर आदि पत्रों में ललित निबन्धों के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के निबन्धों की रचना की। उनका 'मकारमद्यमेलकम्' श्रेष्ठ निबन्ध है। इसके अतिरिक्त ललित निबन्धों की परम्परा में गणेशरामशर्माकृत् घंटागौरवम्, सुरभिसमयावसानम् आदि, स्वामिनाथ आत्रेयकृत् मूर्धानपत्युरारोह आदि, परमानन्द शास्त्रीकृत् सौवर्णी वाचालता, कालिदास कविता, नवंवयः आदि, विष्णुकान्त शुक्ल विरचित अहमपि भारतीयः, काल महिमा आदि, कल्पनाथ शास्त्री प्रणीत पंडित-रामानन्दस्य पत्रम् आदि प्रमुख ललित निबन्ध हैं जो भारती, स्वरमंगला आदि विविध पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में प्रकाशित होकर ललित निबन्ध के रूप में संस्कृत साहित्य का अंग बने।

यात्रावृत्त

संस्कृत साहित्य में यात्रावृत्त एक आधुनिक गद्य विधा के रूप में विकसित होने वाली विधा है। चूंकि इस विधा में दृष्ट वस्तु, स्थान आदि का यात्रावर्णनपरक चित्रण होता है इसलिए इसे यात्रावृत्त नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस विधा में स्वयं की गई यात्रा या प्रत्यक्ष देखी किसी भी घटना का विशेष तौर पर यात्रा का रोचक वर्णन कर रमणीयता पैदा की जाती है। आधुनिक युग में गद्य काव्य के रूप में यात्रा प्रबन्ध को प्रतिष्ठापित करने का श्रेय श्री

शैल दीक्षित जी को प्राप्त होता है। उन्होंने दो यात्रावृत्तों की रचना की है कावेरीगद्यम् एवं प्रवासवर्णनम्। कावेरीगद्यम् में कुर्ग की यात्रा का वर्णन है तथा प्रवासवर्णनम् में भारतीय प्रदेशों की यात्रा का वर्णन है। अन्य यात्रावृत्तों में ए० राजगोपालचारीकृत तीर्थाटनम्, नवलकिशोरकांकरकृत यात्राविलासम्, 38 पं० पद्मशास्त्रीकृत लेनिनामृतम् आदि प्रमुख ग्रन्थ हैं।

जीवनवृत्त

किसी उत्कृष्ट व्यक्ति का जीवन चरित्र लेखन जीवन चरित कहलाता है। संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल में इस विधा की भी सर्जना दिखलाई पड़ती है। जीवनवृत्त के प्रमुख ग्रन्थों में पं० वासुदेवशास्त्री वागेवाडीकररचित श्री गान्धिचरितम् पंढरीनाथाचार्य द्वारा रचित लोकमान्यचरितम् आदि प्रमुख जीवनवृत्त हैं।

पत्रलेखन- आधुनिक संस्कृतरचना में पत्रलेखन विधा एक नवीन विधा के रूप में दृष्टिगोचर होता है। इस विधा के अन्तर्गत लेखक अपने मित्रों या अन्य परिचितों, विद्वानों को पत्रों के माध्यम से अपने भावों, विचारों को आत्मीयता के साथ व्यक्त करता है उन्हीं पत्रों के संग्रह में विद्यमान लेखन शैली का लालित्य, अभिव्यक्ति का अनूठापन, विचारसंग्रह उन्हें पठनीय साहित्य के रूप में प्रतिष्ठित कर देता है जिससे संस्कृत साहित्य में भी पत्रलेखन विधा का विकास दिखलायी पड़ता है। यद्यपि पत्रलेखन की परम्परा अत्यधिक पुरानी है किन्तु साहित्य के रूप में इसकी प्रस्तुति आधुनिक काल में ही दिखलायी पड़ती है। पत्र साहित्य का महत्व इस बात से लगाया जा सकता है कि सन् 1835 ई० में लार्ड मैकाले द्वारा प्रतिपादित शिक्षानीति के विरुद्ध कलकत्ता की एक पाठशाला के विद्वानों ने अपने विद्यालय बन्द होने की स्थिति का करुण चिन्तन करते हुए एक पत्र एच०एच० विल्सन को लिखा था। विल्सन ने उसका उत्तर भी उसी प्रकार संस्कृत में दिया था तथा पाठशाला बन्द होने से बच गई थी। यह पत्राचार संस्कृत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित मानी जा सकती है जिसमें विल्सन की यह प्रसिद्ध उक्ति है जिसे बाद में अध्योया के “संस्कृतम्” पत्र में अपना मुखवाक्य बनाकर हर अंक में छापा था-

यावद् भारतवर्ष स्याद् यावद् विन्ध्यहिमाचलौ
यावद् गंगा च गोदा च तावदेव हि संस्कृतम्।³⁹

पत्र साहित्य गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में विरचित होते हैं। पत्र लेखन विधा के विद्वानों में श्री अप्पाशास्त्री राशिवडेकर जिनके शतपत्र (100) पं० चिन्तामणि रामचन्द्रसहस्रबुद्धे द्वारा प्रकाशित पत्र संग्रह 'पत्ररत्न माला' में प्रकाशित हैं, प्रमुख है। इनके अतिरिक्त पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, पं० बलभद्र शर्मा, महेश शर्मा तर्कचूड़ामणि, घनश्यामदास आदि अनेकानेक विद्वानों के पत्र संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि के रूप में विद्यमान हैं। संस्कृत की विविध पत्रिकाओं जैसे अमरभारती, सूर्योदयः, सुप्रभातम्, सारस्वती सुषमा आदि में संस्कृत पत्रों की विशिष्ट परम्परा दृष्टि गोचर होती है।

इस प्रकार पत्र लेखन की विधा ने संस्कृत साहित्य में नवीन स्तम्भों को प्रस्तुत किया है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में इस प्रकार से विभिन्न रूपों में गद्य, पद्य एवं नाट्य विधाओं में नित् नवीन रचनायें हो रही हैं तथा अल्प काल में ही वस्तु, शिल्प एवं अन्यान्य रूपों में नवाचार होकर इसमें अभूतपूर्व रूप से श्रीवृद्धि हुई है। नवीन विधाओं का यह विकास वर्तमान देश काल परिस्थिति को समावेशित करते हुए प्राचीन विधाओं, मूल्यों एवं सन्देशों को लेकर युग के साथ मूल्यांकित करते हुए आगे बढ़ने का सन्देश प्रदान करता है। जो गीर्वाणवाणी के लिए अत्यन्त शुभ सङ्केत है।

संदर्भ ग्रंथ

1. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, (2000 ई०), सप्तम खण्ड, 30प्र० संस्कृत संस्थान, लखनऊ, भूमिका पृष्ठ-29।
2. वहीं, पृष्ठ-29।
3. वहीं, पृष्ठ-51।
4. मौर्यचन्द्रोदयम्, प्रभूदत्त स्वामी, मानसरोवर प्रकाशन, मेरठ, श्लोक सं०- 15/41, 51।
5. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, (2000 ई०), सप्तम खण्ड, 30प्र० संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ-130।
6. त्रिपाठी राधावल्लभ, संस्कृत साहित्य: बीसवीं शताब्दी, (1999 ई०), राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ-28।
7. द्विवेदी सदाशिवकुमार, स्वातन्त्र्योत्कर्षः, (2013), किशोरविद्या निकेतन, वाराणसी, पृष्ठ-62।

8. शास्त्री सत्यव्रत, इंदिरागांधी चरितम्, (1976 ई0), भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली-110007।
9. द्विवेदी सदाशिवकुमार, स्वातन्त्र्योत्कर्षः, (2013ई0), किशोरविद्या निकेतन, वाराणसी, पृष्ठ-54।
10. द्विवेदी सनातनकविरेवाप्रसाद, सुगतोब्रवीति, (2002 ई0), कालिदाससंस्थानम्, वाराणसी-221005।
11. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, कान्तारकथा, (2009 ई0), वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद।
12. श्री शुक्ल, संस्कृत चन्द्रिका, संस्कृत का समाजशास्त्र, पृष्ठ-94।
13. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, (2000 ई0), उ0प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ-204।
14. त्रिपाठी आचार्य राधावल्लभ, संस्कृत साहित्यः बीसवीशताब्दी, (1999 ई0), राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, पृष्ठ-166.
15. वहीं, पृष्ठ-104.
16. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, (2000 ई0), उ0प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ-298।
17. वहीं, पृष्ठ-99।
18. वहीं, पृष्ठ-99।
19. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, अभिराजयशोभूषणम्, (2006 ई0), वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ-293।
20. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, (2000 ई0), उ0प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ-346।
21. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, संस्कृत साहित्य का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, (2010 ई0), विश्वविद्यालयप्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-400।
22. वहीं, पृष्ठ-265।
23. वहीं, पृष्ठ-404।
24. वहीं, पृष्ठ-264।
25. वहीं, पृष्ठ-404।

26. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, अभिराजयशोभूषणम्, ((2006ई0), वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ-267।
27. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, (2010 ई0), संस्कृत साहित्य का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, विश्वविद्यालयप्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-406।
28. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, अभिराजयशोभूषणम्, ((2006ई0), वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ-267।
29. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, संस्कृत साहित्य का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, (2010 ई0), विश्वविद्यालयप्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-274।
30. वहीं, पृष्ठ-274।
31. वहीं, पृष्ठ-412।
32. वहीं, पृष्ठ-270।
33. वहीं, पृष्ठ-408।
34. शर्मा सत्य प्रकाश, (1992 ई0), भरतमुनि, नाट्यशास्त्र चैखम्बाप्रकाशन, वाराणसी, श्लोक-14/40।
35. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, संस्कृत साहित्य का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, (2010 ई0), विश्वविद्यालयप्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-432।
36. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, संस्कृत साहित्य का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, (2010 ई0), विश्वविद्यालयप्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-433।
37. मिश्र अभिराजराजेन्द्र, लीलाभोजराजम्, (2009 ई0), वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद पृष्ठ-26।
38. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, (2000 ई0), उ0प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ, भूमिका पृष्ठ-518।
39. उपाध्याय बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, (2000 ई0), उ0प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ, भूमिका पृष्ठ-518।